© 2018 IJSRST | Volume 4, Issue 7, March-April-2018
Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X | Page No 520-524

मानव जीवन में एकता के लिये धर्म की भूमिका

मंजू सरोज
शोध छात्रा
दर्शनशास्त्र विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

समकालीन दौर में भी भारत ही नहीं बल्कि लगभग सम्पूर्ण विश्व रिलिजन के सही अर्थ को पूर्णरूपेण नहीं समझ सका है। क्योंकि यदि ऐसा नहीं रहता तो कम से कम 'रिलिजन' एवं 'धर्म' (भारतीय सन्दर्भ) के नाम पर इतने दंगे–फसाद, अराजकता, मजहबों में कटुता का भाव, साम्प्रदायिक हिंसा एवं तमाम आतंकी घटनाएँ आदि शायद इतनी नहीं होती, जितनी आज हो रही है।

मनुष्य जगत का एक तार्किक प्राणी कहा जाता है। उसे यह समझ जगत के अन्य जीवों की तुलना में कहीं अधिक प्राप्त है कि क्या उचित है? क्या अनुचित है? ठीक इसी प्रकार नैतिक एवं अनैतिक में भी तुलना करने में वह सक्षम है। फिर यदि वह उपरोक्त बातों को व्यवहार में ना ला पाये तब यह विषय चिंतनीय बन जाता है। ठीक यही बातें हम धर्म पर भी लागू कर सकते हैं। यदि हम 'धर्म' एवं 'रिलिजन' में छिपे भाव को समझ लें एवं साथ ही आत्मसात भी कर लें तो धर्म के नाम पर झगड़े खत्म हो सकते हैं। धर्म के सही अर्थ को समझना ही धर्म का सही रूप जानना है। वैश्विक स्तर पर शान्ति चाहिये तो मानव को एक ऐसे 'रिलिजन' की आवश्यकता होगी जिसमें मानव एकता का भाव हो।

मानव जाति में एकता की भावना लाने वाले 'रिलिजन' की चर्चा से पहले सर्वप्रथम हम रिलिजन के अनेक सन्दर्भों को समझ लेते हैं। यदि हम शब्द रिलिजन की उत्पत्ति की बात करें तो हम पायेंगे कि रिलिजन[1] शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के 'रिलिजेयर' नामक शब्द से हुई है। जिसका अर्थ है बांधना इस दृष्टि से रिलिजन वह है जो मनुष्य तथा ईश्वर में सम्बन्ध स्थापित करता है और मनुष्यों को परस्पर बांधता या संगठित रखता है।

© 2018 IJSRST | Volume 4, Issue 7, March-April-2018
Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X | Page No 520-524

अब रिलिजन के भारतीय सन्दर्भ की भी बात कर लेते हैं भारतीय सन्दर्भ में 'रिलिजन' शब्द 'धर्म' शब्द का रूप (नाम) ले लेता है। इस[2] शब्द की व्युत्पत्ति 'धि' नामक धातु से हुई है जिसका अर्थ है 'धारण करना' इस शब्द की दृष्टि से धर्म की व्याख्या करते हुए 'महाभारत' में यह कहा गया है कि जो समाज को धारण करे वह धर्म है। 'ध्रियते लोकः अनेन इति धर्मः।' 'धरति धारयति वा लोकम् इति धर्मः' संभवतः धर्म की इस परिभाषा का वास्तविक निहितार्थ यह है कि मनुष्य का वह स्वभाव है जो सम्पूर्ण मानव समाज को परस्पर संगठित रखता है। इस दृष्टि से धर्म को सामाजिक एकता अथवा संगठन की शक्ति के रूप में देखा जा सकता है।

यहाँ यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि हमारे हिन्दू धर्मग्रन्थों, पुराणों आदि में धर्म की एवं पाश्चात्य संस्कृति में रिलिजन की जो सर्वमान्य व सार्वभौमिक अर्थ है, परिभाषा है, वह लगभग समान ही है क्योंकि रिलिजन एवं धर्म दोनों में ही इसी बिन्दु से समानता झलकता है कि दोनों ही मानव एकता, परस्पर सहयोग, मनुष्य–ईश्वर सम्बन्ध, शान्ति एवं कर्तव्य पालन की बात करते हैं।

जिस अशांति को लेकर व्यापक स्तर पर बहस छिड़ी हुई है, क्या वह वास्तव में 'रिलिजन' एवं 'धर्म' के कारण हुई है? साधारणतः लोग बड़े आराम से धर्म की तरफ इशारा कर देते हैं कि यही कारण है। दरअसल जो धर्म के अन्तर्गत तमाम प्रकार के तथाकथित सम्प्रदाय/समुदाय है मूल रूप में अशांति के लिये दोषी है। चूँकि धर्म से नहीं बल्कि साधारण जनमानस का धर्म के प्रति साधारण सोच रखने से होती है। साधारण व्यक्ति धर्म को सिर्फ धार्मिक अनुष्ठान, आस्था एवं कर्मकाण्डों तक ही सीमित कर देता है। वास्तव में जो इसका अर्थ है उसकी तरफ झुकाव ना होकर बात सिर्फ पूजा–पाठ, मंदिर–मस्जिद में ही आकर रूक जाती है। परिणामस्वरूप राजनीतिज्ञ इसका लाभ अपनी चुनावी योजनाओं के अन्तर्गत समय–समय पर उठाते रहते हैं और अंततः सफल भी हो जाते हैं। मेरे समझ से राजनीतिज्ञ जो धर्म के नाम पर अपनी चुनावी जीत पक्की करते हैं वह जीत तो जरूर उनकी होती है परन्तु बार–बार हार धर्म की होती है ना कि विरोधी पक्ष की इसकी हार तो औपचारिक है। क्योंकि धर्म का जो मर्म है वह यही है कि हम समाज के प्रति, देश के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करें, सद्भाव को धारण करें ना कि स्वार्थ सिद्धी के लिये राष्ट्र में अराजकता फैलाएँ।

© 2018 IJSRST | Volume 4, Issue 7, March-April-2018
Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X | Page No 520-524

पश्चिमी सभ्यता में भी रिलिजन को लेकर कुछ कम ऊहापोह नहीं है वहाँ पर भी प्राचीन काल से लेकर समाकालीन दौर तक ना जाने कितने लोगों की बलि सिर्फ इसी बात से दे दी गई कि उनका रिलिजन श्रेष्ठ है। कुछ विद्वान तो यहाँ तक स्वीकार करते हैं कि तीसरा विश्व युद्ध हुआ तो धर्म के नाम पर ही होगा। (विशेषकर ईसाई बनाम इस्लाम)।

यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि कोई भी धर्म बड़ा या छोटा नहीं होता है हम अपनी इच्छा से किसी भी धर्म में विश्वास कर उसे अपना सकते हैं बशर्ते हम किसी भी धर्म के साम्प्रदायिक विचारधारा से प्रभावित ना हो क्योंकि यहीं से मानव को मानव से अलग करने की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है, सम्प्रदाय ही है जो धर्म को धर्म से लड़वाता है, उसमें भेद करता है जबकि धर्म हमें धारण करना अर्थात जो समाज को धारण करें नैतिकता के मार्ग पर रहते हुये वही सच्चे अर्थों में धार्मिक व धर्म पालक है। इस प्रकार धर्म व नैतिकता एक–दूसरे से सम्बन्धित भी है।

हम रिलिजन तथा धर्म के शाब्दिक अर्थ को पुस्तकों से पढ़कर ज्ञान तो प्राप्त कर सकते हैं परन्तु शान्ति, सौहार्द के लिये इसके व्यापक अर्थ को समझने के साथ–साथ व्यवहार में लाना होगा। विवेकानन्द[3] मनुष्य में विद्यमान देवत्व की अभिव्यक्ति को धर्म कहते हैं। धर्म का अर्थ मत–मतान्तर कदापि नहीं है। सभी का धर्म श्रेष्ठ है।

भारतीय संविधान का अनुच्छेद–25 हमें किसी भी धर्म को मानने की अबाध रूप से आजादी देता है पाश्चात्य दार्शनिक 'काण्ट' ईश्वर को आस्था का विषय मानते हैं इस प्रकार हम देख सकते हैं कि धर्म का जुड़ाव ईश्वर से भी है अतः इस प्रकार तो धर्म भी स्वयं के आस्था का विषय हुआ। क्योंकि रिलिजन का अर्थ ही है मनुष्य व ईश्वर का परस्पर सम्बन्ध।

बचपन से ही हम अपने सामाजिक परिवेश में तमाम धर्मों से सम्बन्धित कर्मकाण्डों, अनुयायियों को देखते आये हैं एवं इसी आधार पर उनके प्रति मूरत भी अपने मन मस्तिष्क में बनाते आये हैं। चूँकि बचपन से तरूण एवं तरूण से वृद्धावस्था तक मानव अपने जीवन का एक लम्बा समय व्यतीत कर लेता है इस दौरान धर्म का जो रूप वह अपने आसपास देखता है तो उसकी गहरी छाप अच्छी–बुरी दोनों उसके मन मस्तिष्क पर बैठ जाती है तथा वह शायद ही इससे बाहर निकल पाता है तथा इसी के अनुसार व्यवहार भी करने लगता है जैसे वह श्रेष्ठ धर्म

© 2018 IJSRST | Volume 4, Issue 7, March-April-2018
Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X | Page No 520-524

का है, अन्यों का धर्म श्रेष्ठ नहीं है आदि–आदि। यहीं से एक दूसरे के बीच नफरत का भाव बढ़ता है तथा धर्म का स्वरूप कुछ अलग ही उभरने लगता है।

यह तो हुई रिलिजन एवं धर्म के सम्बन्ध में कुछ समझने योग्य बातें हैं, चूँकि हमें एक ऐसे रिलिजन की बात करनी है जो मानवों में एकता लाये अतः इसी क्रम में हम इस पक्ष पर भी ध्यान देने का प्रयास करेंगे।

मेरे समझ से मानवीय एकता हेतु जगत के सभी मानव जाति के लिये कोई एक आदर्श धर्म बनाना बहुत ही कठिन या ये कहें कि असंभव सा कार्य होगा। क्योंकि विश्व अनेक धर्मों से भरा पड़ा है तथा प्रत्येक धर्म हमें नैतिक शिक्षा ही देते हैं। हम किसी को भी बुरा नहीं कह सकते हैं क्योंकि सभी का अपना–अपना महत्व है और इन सभी धर्मों में मानवता के बीज छिपे हुये हैं उदाहरणतः जैन धर्म की बात की जाये तो हम पायेंगे कि कैसे यह सम्यक्–दर्शन, सम्यक्–ज्ञान व सम्यक्–चरित्र जो कि 'रत्नत्रय' भी कहलाते हैं का दृष्टिकोण अपनाने की बात जगत के सम्बन्ध में करता है साथ ही अनेकान्तवाद, स्याद्वाद एवं अहिंसा जैसा सामाजिक समन्वय का सिद्धान्त भी है जो लोक–व्यवहार, लोक–कल्याण एवं विश्व–शान्ति स्थापित करने के लिये आज भी प्रासंगिक है।

हमें इस बात से सहमत होना पड़ेगा कि लगभग सभी धर्मों की प्रासंगिकता युगों–युगों तक बनी रहेगी। लार्ड एवेबरी का कथन है कि ''विश्व[4] में शान्ति तथा मानवों के प्रति सद्भाव का कारण धर्म ही है जो घृणा व अत्याचार को उत्तेजित करता है उसे शब्दशः धर्म भले ही कहा जाए, किन्तु भाव की दृष्टि से यह पूर्णतया मिथ्या है।''

सार बस इतना ही है कि मानव एकता की भावना प्रबल करने के लिये रिलिजन या धर्म में आमूल–चूल परिवर्तन तो नहीं कर सकते हैं क्योंकि सबका महत्व एवं गरिमा अपनी–अपनी जगह विद्यमान है। जब[5] तक दुनिया में दुख और मृत्यु है तब तक लोगों को धर्म की जरूरत रहेगी। जिसे जो धर्म अपनाना है अपनाये परन्तु पहले 'धर्म' शब्द के व्यापक अर्थ को आत्मसात भी कर लें क्योंकि सभी धर्मों के साथ धर्म शब्द अवश्य लगा होता है अतः यही समझने व तर्क करने योग्य बात हो सकती है तो मेरी समझ से ऐसा इसलिये है क्योंकि धर्म हमें अपनी शक्ति महसूस करवाना चाहता है और निःसंदेह धर्म शक्तिशाली है भी।

© 2018 IJSRST | Volume 4, Issue 7, March-April-2018
Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X | Page No 520-524

क्योंकि बिना धर्म के वास्तविक[6] शान्ति नहीं स्थापित की जा सकती है जैसे पुलिस तथा सैनिक बल के कारण साम्राज्य का संरक्षण घातक शक्तियों से किया जाता है उसी प्रकार धर्मानुशासित अन्तःकरण के द्वारा उच्छृंखल तथा पापपूर्ण प्रवृत्तियों से बचकर जीवन तथा समाज निर्माण में उद्यत होता है।

अतः वास्तव में मानव एकता हेतु हम आपस में ही वैश्विक स्तर पर रिलिजन तथा धर्म के मर्म को आत्मसात करें तथा यह समझने का प्रयास करेंगे कि धर्म ही अपने आप में एक आदर्श है धर्म शब्द में ही सभी सकारात्मक बातें भावरूप में छुपी हुई हैं। कुल मिलाकर सभी धर्मों के प्रति धार्मिक उदारता की भावना ही विश्व–शांति में सहायक सिद्ध हो सकती है। विभिन्न धर्मों के प्रति धार्मिक उदारवादी प्रवृत्ति ही मानवों में एकता ला सकती है। परिणामस्वरूप विश्व में शान्ति स्वतः स्थापित हो सकती है। मानव एकता के लिये वैश्विक स्तर पर धार्मिक उदारतावाद एक आदर्श धर्म/रिलिजन साबित हो सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. धर्म दर्शन की मूल समस्याएँ, पृ0सं0–09, वेद प्रकाश वर्मा, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।
2. वही, पृ0सं0–08
3. जैन शासन, पृ0सं0–13, पण्डित सुमेरूचन्द्र दिवाकर, प्राच्य श्रमण भारती, मुजफ्फरनगर।
4. वही, पृ0सं0–12
5. वही
6. वही
7. काणे पी0वी0, धर्मशास्त्र का इतिहास, भाग–1, पृ0–40 धर्मशास्त्र संग्रह, भाग–2, पृ0सं0–3, आमुख।
8. गौतम धर्मसूत्र–1/1
9. मनुस्मृति